प्राक्कथन

दिनकर के काव्य में मुझे यत्र-तत्र कर्म की उस महिमा का वर्णन दिखाई दिया जिस पर विचार करने के अनन्तर कोई सरलतापूर्वक इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि दिनकर ने गीतोक्त कर्मयोग अथवा अनासक्ति योग का पर्याप्त अध्ययन किया था और वे उससे अत्यधिक प्रभावित हुए । उदाहरणार्थ "कोयला और कवित्व" में दिनकर कर्म मात्र को मुदिता आनन्द और पुलक मानते हैं -

"सिद्ध गीत, जो रचा गया हो करघों की घर्घर में
सिद्ध पुरुष जो नानाविध कर्मों में लगा हुआ है
बरबस नहीं सहर्ष, स्वयं प्रेरित अपनी इच्छा से
क्योंकि कर्म श्रम नहीं, कर्म मुदिता आनन्द पुलक है ।"[1]

आगे इसमें किस तरह से कर्म अकर्म में परिणत होता है । इसका व्याख्यान गीता के श्लोक "कर्मण्यकर्म यः पश्येत् अकर्मणि च कर्म यः"[2] के अनुसार किया गया है । दिनकर निष्कर्ष निकालते हैं कि जिस सहज कर्मयोगी के विकर्म अवरुद्ध हो जाते हैं, उसके सारे कर्म अकर्म भाव में बदल जाते हैं । उस स्थिति को न तो संन्यास कहा जा सकता है और न उसमें कर्मों का स्वरूपतः त्याग है । वह प्राणों की एकायन समाधि है :-

"ठहर गया जिसका विकर्म, उस सहज कर्मयोगी के
सारे कर्म अकर्म-भाव में स्वयं बदल जाते हैं ।
यह अकर्म संन्यास नहीं है, न तो त्याग कर्मों का
चरम-बिन्दु पर चढ़े प्राण की यह एकायन स्थिति है
जब कर्मातिरेक के कारण कर्म नहीं दिखते हैं
चक्र दीखता स्थिर जब वह तेज़ी से घूम रहा हो ।[3]

---

1. कोयला और कवित्व, पृ॰78
2. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय-4, श्लोक 18
3. कोयला और कवित्व, पृ॰8।

कुरुक्षेत्र में भीष्म पितामह के मुँह से युधिष्ठिर को जो उपदेश दिया गया है और जिस निष्काम कर्म की प्रेरणा दी गई है वह गीता के श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को प्रदत्त प्रेरणा का ही हिन्दी रूपान्तर है । रश्मिरथी का कर्ण अनासक्त योद्धा के रूप में प्रस्तुत किया गया है । वह युद्ध में जय प्राप्त कर उसके फल को भोगने के स्थान पर युद्ध में हारे हुए पक्ष की ओर जाने के कुन्ती को दिए आश्वासन में अपनी निष्काम वीरता का परिचय देता है । और तो और प्रेम के क्षेत्र में दिनकर अनासक्ति को अपनाने का उपदेश देते हैं । उर्वशी की ये पंक्तियाँ विचारणीय हैं -

(अ) "फलासक्ति, दूषित कर देती ज्यों समस्त कर्मों को
उसी भाँति, वह काम-कृत्य भी दूषित और मलिन है ।"

(आ) "नहीं इतर इच्छाओं तक ही अनासक्ति सीमित है ।
उसका किंचित् स्पर्श प्रणय को भी पवित्र करता है ।"[2]

इस तरह निष्काम काम उर्वशी का प्रतिपाद्य विषय सिद्ध होता है हुंकार में भी-

"कर्म का एकमात्र वरदान
सत्य ही क्या जीवन का श्रेय ।"[3]

इन शब्दों में फल को नहीं, कर्म को ही सब कुछ माना गया है । इस तरह फलासक्ति को छोड़ कर कर्म करने की प्रेरणा देने वाले दिनकर के काव्य का कर्मयोग अथवा अनासक्ति योग के शास्त्र के आधार पर अध्ययन करने की बलवती स्पृहा मुझे बार-बार विवश करने लगी कि मैं इस दिशा में एक ओर तो कर्मयोग-शास्त्र का अध्ययन करूँ और दूसरी ओर दिनकर के काव्यों को इस दृष्टि से पुनः पढ़ने का प्रयास करूँ ।

फलतः सर्वेक्षण के लिए दिनकर के व्यक्तित्व और उनकी कृतियों पर प्रकाश में आई पुस्तकों के अध्ययन का उपक्रम चला । जिन्हें मैं पढ़ पाई उनमें

---

1. उर्वशी, पृ॰82
2. वही, पृ॰44 तृतीय सर्ग
3. हुंकार, पृ॰56

से कुछ विशिष्ट पुस्तकों के नाम नीचे दिए गए हैं -

§1§ रामधारी सिंह दिनकर और उनका कुरुक्षेत्र - तारकनाथ वाली

§2§ जनकवि दिनकर - डा॰ सत्यकाम वर्मा

§3§ युगकवि दिनकर - प्रो॰ मुरली धर श्रीवास्तव

§4§ दिनकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व - जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

§5§ दिनकर कुछ पुनर्विचार - डा॰ शंभुनाथ

§6§ दिनकर एक पुनर्मूल्यांकन - विजेन्द्र नारायण सिंह

§7§ दिनकर का काव्य - द्वारिकाप्रसाद सक्सेना

§8§ दिनकर का वीर काव्य - धर्मपाल सिंह आर्य

§9§ उर्वशी संवेदना और शिल्प - डा॰ सुशीला शर्मा

§10§ दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना - सुनीति

§11§ दिनकर वैचारिक क्रांति के परिवेश में - डा॰ पी॰ आदेश्वरराव

§12§ उर्वशी समग्र अध्ययन - डा॰ दयाराम जोशी

§13§ दिनकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व - कु॰ पदमावती, एम॰ए॰

§14§ दिनकर की काव्य-भाषा - डा॰ यतीन्द्र तिवारी

§15§ दिनकर की काव्य-साधना - नेमिचन्द्र जैन भावुक

§16§ दिनकर व्यक्तित्व एक कृतित्व - जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

इन पुस्तकों में अनासक्ति योग का वर्णन नाममात्र को ही है। जिन पुस्तकों में दिनकर-दृष्ट अनासक्ति योग का थोड़ा सा वर्णन मिलता है वे निम्नलिखित हैं -

§1§ दिनकर का रचना संसार - डा॰ छोटेलाल दीक्षित

§2§ दिनकर की उर्वशी का समीक्षात्मक अनुशीलन - रमाशंकर तिवारी

§3§ उर्वशी में कामाध्यात्म - सुलक्षणा शर्मा

§4§ दिनकर के काव्य में क्रान्तिमन्त चेतना - निधि भार्गव

§5§ उर्वशी उपलब्धि और सीमा - विजेन्द्रनारायण सिंह

§6§ उर्वशी : विचार और विश्लेषण - संपा॰ डा॰ वचनदेव कुमार

§7§ उर्वशी एक अध्ययन - डा॰ व्रजलाल गोस्वामी

§8§ उर्वशी एक नवीन दृष्टि - डा॰ सतीश कुमार भार्गव

§9§ महाकवि दिनकर : उर्वशी तथा अन्य कृतियाँ - विमल कुमार जैन

§10§ युगचारण दिनकर - डा॰ सावित्री सिन्हा

§11§ उर्वशी कामुकी और चिन्तन - डा॰ अरविन्द पाण्डेय

§12§ आधुनिकता के हाशिए में उर्वशी - जयसिंह नीरद

इन पुस्तकों में अनासक्ति पर चर्चा तो हुई है परन्तु पूर्ण रूप से अनासक्ति योग के परिप्रेक्ष्य में दिनकर काव्य का अध्ययन तब भी अछूता रहा। जिस रूप में प्रकाश डालना मेरा मन्तव्य रहा है उस रूप में किसी ने अभी तक दिनकर की अनासक्ति को दिखाने का प्रयास नहीं किया।

मैंने निष्काम काम को अनासक्ति योग का नाम दिया है। यह नाम कर्मयोग से अधिक व्यापक है क्योंकि कर्मयोग का सम्बन्ध केवल कर्म से ही है जब कि अनासक्ति के अन्तर्गत वे समस्त भावनाएँ भी आ जाएँगी जो कभी कर्म में परिणत होती ही नहीं। उदाहरणार्थ जो प्रेम शारीरिक मिलन के रूप में कर्मक्षेत्र में पदार्पण नहीं करता वह भी अपनी निष्कामता के कारण अनासक्ति योग की परिधि में सरलतया गृहीत हो सकता है इसी तरह कर्म में बदलने से पहले किंवा विचारों तक ही सीमित रहने वाला शील अनासक्ति योग के भीतर ले लिया जाए तो किसी को कोई आपत्ति नहीं होगी।

दिनकर के अधिकांश काव्य अनासक्ति योग से प्रभावित हैं, किन्तु एक तो कलेवर के बढ़ जाने के भय से केवल इस दिशा में विशिष्ट काव्यों का अध्ययन करना ही मेरे शोध प्रबन्ध का विषय बना। दूसरे कर्मयोग अथवा अनासक्तियोग की गरिमा पूरी तरह तभी सामने आ सकती है जब कि किसी पात्र के कलेवर में वह अवतरित हो। यही कारण है कि चरित-काव्यों में उसकी स्थिति सुदृढ़ दृष्टिगत होती है। चूंकि कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी तथा उर्वशी में अनासक्ति मूर्त रूप में सामने उपस्थित रहती है। मैंने - इसीलिए इन्हीं के आधार पर उसे खोजने की ठानी।

मुझे अनासक्ति योग के परिप्रेक्ष्य में दिनकर काव्य का अध्ययन करना था इसलिए अनासक्ति के स्वरूप और भारतीय विचारधारा में उसके विकास

को संक्षेप में दिखाने का प्रयत्न किए बिना मेरा कार्य गति नहीं पकड़ सकता था; किन्तु इस बात का अवश्य ध्यान रखा गया कि मुझे मूलत: दर्शन ग्रन्थ नहीं लिखना था । अनासक्ति योग सम्बन्धी जो बातें दिनकर काव्य में आई हैं, उन्हीं के स्वरूप को मुझे पूर्ववर्ती ग्रन्थों में खोजना था। जिनका दिनकर ने कोई उल्लेख नहीं किया, उन्हें खोजना मेरे शोध-प्रबन्ध का विषय नहीं; किन्तु उन सिद्धान्तों का स्वरूप भी पूर्ववर्ती ग्रन्थों में खोजना ही पड़ा जिन्हें दिनकर ने नया रूप दिया ; क्योंकि ऐसा किए बिना तुलना करना कठिन हो जाता ।

भारतीय दर्शन में कर्मसिद्धान्त बड़ा जटिल विषय है । गीता "गहना कर्मणो गति:" कह कर उसके स्वरूप को बहुत कुछ दिखाती[1] हुई भी अपनी असमर्थता प्रकट करती है । पूर्व-मीमांसा कर्म सिद्धान्त का आदि ग्रन्थ कहा जा सकता है ; किन्तु कर्मयोग में गृहीत कर्म-सिद्धान्त उससे भिन्न जा पड़ता है फिर भी विकास क्रम को खोजने में उसे ही प्रथम पड़ाव मानना पड़ा ।

दिनकर के काव्य में अनासक्ति के बीजों को खोजने के हेतु, उसके काव्य की समस्त भूमि को कुरेदना तो मुझे पड़ा ही; किन्तु ज्यों ही एक बीज मुझे वहाँ मिला तो मैं उसे लेकर ही सन्तुष्ट होकर आगे बढ़ गई । मुझे उन काव्य-ग्रन्थों का विशेष अध्ययन करना था जहाँ अनासक्ति बीज रूप में नहीं पल्लवित पुष्पित एवं फलित भी दिखाई देती है : तदर्थ मैंने रश्मिरथी, कुरुक्षेत्र तथा उर्वशी को चुना और मुझे पूरी आशा है कि यदि मैं उक्त काव्य-ग्रन्थों में अनासक्ति और उसके अन्यान्य अवयवों को ढूँढ पाई हूँ तो मेरा शोध-प्रबन्ध अपने सीमित कलेवर में पाठकों का मनस्तोष-कारक सिद्ध होगा ।

गीतोक्त कर्मयोग सहजयोग तथा हठयोग के समन्वय के रूप में हमारे सामने आता है । जहाँ गीता यह मानती है कि बाह्य इन्द्रियों का दमन करना मिथ्याचार है[2] वहाँ वह यह भी स्वीकारती है कि विषय-हीन व्यक्ति

---

1. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 4, श्लोक 17
2. वही, अध्याय - 3, श्लोक 6

की आसक्ति भी महत्तर आस्वाद्य के मिल जाने पर निवृत्त हो जाती है ।[1]

यहाँ मैं यह स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि अनासक्ति-योग वह नहीं है जब कि मनुष्य बिना प्रयोजन के कर्म करता है बल्कि वह है जब कि वह अपने लिए कर्म नहीं करता, अपितु महत्तर उद्देश्य अर्थात् परार्थ कर्म करता है । कर्मयोग विक्षिप्त कर्म नहीं है । उसमें कर्म करने की निखिल कुशलता निहित है "योग: कर्मसु कौशलम् ।"[2]

इस तरह रश्मिरथी का कर्ण दुर्योधन की जय के हेतु लड़ता हुआ भी कर्मयोगी है । इसलिए कि वह जय के परिणाम को भोगने के लिए नहीं लड़ रहा है । कुन्ती को कहे गए इन शब्दों में -

"जीते जो भी यह समर झेल दु:ख भारी,
लेकिन होगी मां ! अन्तिम विजय तुम्हारी ।
रण में कट मर कर जो भी हानि सहेंगे
पाँच के पाँच ही पाण्डव किन्तु रहेंगे ।"[3]

यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अर्जुन के मारे जाने पर वह दुर्योधन का साथ छोड़ कर पाण्डवों से जा मिलेगा । वह एक शीलवान् अनासक्त योद्धा है । युद्ध के अनन्तर जो हारा, कर्ण उसके पक्ष में इसलिए जाना चाहता है कि उसे पुन: जिताने के लिए अवसर मिलता रहे । मैंनेयह सिद्ध करना चाहा कि रश्मिरथी का कर्ण सिद्ध अनासक्त योद्धा है; कुरुक्षेत्र का युधिष्ठिर साधक कर्मयोगी है । भीष्म उसे दीक्षा देते हैं और उर्वशी का पुरुरवा भी अनासक्त प्रेम-साधक है । उर्वशी उसे दीक्षित करती है ।

दिनकर ने उर्वशी में जिस निरुद्देश्य काम की बात कही है, वह जैविक धरातलीय काम को लेकर कही है । मुझे इसीलिए अनासक्त काम के

---

1. "विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन: ।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ।"
- गीता, अध्याय 2, श्लोक 59
2. श्रीमद्भगवद्गीता - अध्याय 2/50
3. रश्मिरथी, पृ॰79

तीन भेद करने पड़े । प्रथम जैविक धरातलीय काम, दूसरा कर्तव्यभावनापरक काम और तीसरा आध्यात्मिक काम । जैविकधरातलीय काम में संलग्न व्यक्तियों का भले ही कोई उद्देश्य न हो अतएव उनके काम-सम्पर्क को निरुद्देश्य भी कहा जा सकता है; किन्तु उनके काम-सम्पर्क प्रकृति या ईश्वर की सोद्देश्य सृष्टि योजना का परिणाम है । दिनकर ने जैविक धरातल के काम में सम्बद्ध व्यक्तियों की नैसर्गिक प्रवृत्ति को देखकर उसे निरुद्देश्य काम कहा है । वस्तुत: कोई कर्म चाहे वह निष्काम हो या सकाम निरुद्देश्य नहीं देखा जाता है । केवल विक्षिप्त कर्म ही निरुद्देश्य होता है । अनासक्ति योग में कर्म कामना-रहित तो देखा जाता है; परन्तु उसका एक न एक प्रयोजन होता है जिसे कर्ता स्वार्थबुद्धि से दूर रहकर कर्तव्यभावना से निश्चित करता है या वह उसमें प्रकृति या ईश्वर की प्रेरणा से प्रवृत्त होता है ।

श्रद्धेय गुरुवर्य श्री मथुरादत्त पाण्डेय जी के कुशल पथ-प्रदर्शन तथा उपयोगी निर्देशन से ही यह कार्य पूर्ण हो पाया है । जिन्होंने अपने बहुमूल्य परामर्शों और विचारों से मेरे अध्ययन को शक्ति दी और अनेक बार मेरी निराश मन: स्थिति को अपने गरिमामय तेज से उद्दीप्त विद्या तथा उदार प्रयत्नों से मुझे उत्साह प्रदान करते रहे । शोध-कार्य करते समय कभी मुझे वे "रश्मिरथी" के "परशुराम" लगे कभी "कुरुक्षेत्र" के "योगीश कृष्ण" । समय-समय पर उनसे मुझे गुरु, माता तथा पिता के स्नेह-सौजन्य और सन्निर्देश मिलते रहे । शोध कार्य करते समय मुझे यह अनुभव हुआ कि वह ज्ञान के अपार सागर हैं, जितना गहराई में जाओ उतना गहरा ज्ञान अर्जित करो । ऐसे गुरु की मंगल कामनाओं और शुभाशीषों तथा सत्प्रेरणाओं के लिए मैं सदैव ऋणी रहूँगी ।

मैं अपनी स्नेहमयी माँ, परम-हितैषी पिता के प्रति, जो मुझ से अमित दुलार के साथ शीघ्र काम समाप्त करवाने का प्रयास करते रहे, अत्यधिक कृतज्ञ हूँ ।

विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान तथा पंजाब युनिवर्सिटी के

विद्वद् वर्ग की भी मैं अत्यन्त आभारिणी हूँ कि जिसने समयानुकूल अपने उचित-परामर्शों द्वारा मेरा मार्ग प्रशस्त किया ।

पुस्तकालय के प्रबन्धकों, अधिकारियों, कर्मचारियों के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट किए बिना नहीं रह सकती, जिन्होंने मुझे उन्मुक्त सुविधाएँ प्रदान करके इस शोध कार्य में मेरी पर्याप्त सहायता की है ।

उन समस्त विद्वान् लेखकों की भी मैं कृतज्ञ हूँ जिनकी कृतियों का मैंने अवलम्ब लिया ।

प्रभा किरण

(प्रभा किरण)

- - - - - -